International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 64-67

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 64-67
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 12-03-2016
Accepted: 14-04-2016

डा॰ दुर्गा जैन
अंशकालिक प्रवक्ता (संस्कृत विभाग)
वर्धमान (पी.जी.) कालेज, बिजनौर

Correspondence
डा॰ दुर्गा जैन
अंशकालिक प्रवक्ता (संस्कृत विभाग)
वर्धमान (पी.जी.) कालेज, बिजनौर

महाकवि कालिदास का सौंदर्य बोध

डा॰ दुर्गा जैन

महाकवि कालिदास भारतीय साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विभूति है। देशकालातीत गौरव से मण्डित, भारतीय साहित्य की दीपशिखा, गीर्वाणी के अमर कवि महाकवि कालिदास के काव्य की कमनीयता, विलक्षण सौन्दर्योन्मीलन तथा सरसता विश्व मानव को गुदगुदाती है। कवि की कीर्ति–कौमुदी भारतीय साहित्य को युगों से आलोकित कर रही है और युगों करती रहेगी। ऐसे ही कवियों के लिये भर्तृहरि ने कहा होगा–

जयन्ति ते सुकृतिनः रससिद्धा कवीश्वराः।
नास्ति ऐषां यशः काये जरामरणजं भयम्।। [1]

कालिदास जैसा कवि बनाया नहीं जाता ऐसी अलौकिक प्रतिभायें स्वयं भू हुआ करती है। इन्हीं के लिये सम्भवतः श्रुति कहती है –

कविर्मनीषि परिभू स्वयंभू। [2]

आदि कवि वाल्मीकि, व्यास तथा कालिदास प्राचीन भारतीय इतिहास की अंतरात्मा के प्रतिनिधि है और सब कुछ नष्ट हो जाने के बाद भी इनकी कृतियों में हमारी संस्कृति के प्राणतत्व सुरक्षित रहेंगे। वास्तव में, जातीय प्रतिभा ने सत्यं, शिवं और सुंदरं के अनुसंधान में जो बहुमूल्य मणिरत्न प्राप्त किये वे सभी कालिदास की रचनाओं में एकत्र सन्निविष्ट हैं। 'ईशावास्योपनिषद' में कहा गया है कि सत्य का मुख स्वर्ण कलश से ढका हुआ है –

"हिरण्यमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।"

वस्तुतः जीवन की अग्नि को प्रज्वलित रखने के लिये सौन्दर्य के सुवर्ण का आकर्षण अत्यंत आवश्यक है। कालिदास ने इसी सौंदर्य का आंकठ आस्वादन किया था। सौन्दर्य का मुख्य आशय काव्यगत लालित्य विधान या रमणीयता है। काव्य का मूलभूत तत्व रमणीयता ही सौन्दर्य तंत्र है।

सौन्दर्य एक विशेष मनोदशा है यथार्थ जीवन में इसकी अनुभूति होती है। यह दृष्टा या विषयी द्वारा सहज संवेद्य है। इससे चित्तवृत्ति का उन्मेष, विकास और प्रसादन होता है। सौन्दर्य का अवबोध साधारणतः तीन स्तरों पर होता है– प्रकृतिगत, लोकगत, कलागत। हिमशिखर, मानसरोवर, ऊषा, विभावरी, बिहाग, मृगशावक, झरना आदि की सुन्दरता में भी कला कहीं न कहीं अपने लिये सौन्दर्य खोज लेती है। श्रृंगार रस के स्थायी भाव रति का स्थूल रूप काम है। भरत ने श्रृंगार रस से हास्य रस की उत्पत्ति मानी है। यद्यपि 'फ्रायड' नारी पुरुष के प्रणयजनित आकर्षण के मूल में सौन्दर्य को या काम को मानता है। वाल्मीकि ने भी इसका विरोध नहीं किया उन्होंने भी सौन्दर्य के संजनन का आधारभूत तत्व काम को ही माना है। राम के प्रणय वर्णन के संदर्भ में कवि ने काम मनमत्त मनोज आदि का प्राय प्रेम के अर्थ में प्रयोग किया है। पण्डित राज ने अपने रसगंगाधर में रमणीयतावाद की पूर्ण प्रतिष्ठा की है। उसे वह काव्य का काठ लक्षण मानते हैं।

सौन्दर्यतत्व चिन्तक विद्वानों ने सौन्दर्य का विमर्श दो प्रकार से किया है – प्रथम विषयगत, दूसरा विषयीगत। वस्तुतः सौन्दर्य को वस्तुनिष्ठ एवं आत्मनिष्ठ दोनों मानना ही तर्कसंगत होगा। वस्तुनिष्ठता सर्वजन्य सुलभ है। आत्म निष्ठता मानसिक विशिष्टता पर निर्भर करती है। पहले में नैनाकर्षण तथा दूसरे में अन्तर्मन का आकर्षण प्रधान होता है। सौन्दर्य का आत्मतत्व आकर्षण ही है। साहित्य में दोनों प्रकार की दृष्टियाँ प्राप्त होती है।

दधिमधुरं मधुमधुरं द्राक्षामधुरः सीताऽपिमधुरैव।
तस्यतदेवहीमधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नं।।
महाकवि माघ से यदि पूछा जाये तो उनका कथन होगा -
"क्षणे–क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपम् रमणीयतायाः।" [3]

श्री हर्ष मन की संलग्नता को सौन्दर्य का आधार मानते हैं। उनका कहना है –

यथा यूनस्तद्वत्परमरमणीयाऽपिरमणी
कुमाराणामन्तः करणहरणं नैव कुरूते?[4]

महाकवि भारवि वस्तुओं में सौन्दर्य न मानकर प्रेमी के हृदय में सौन्दर्य को मानते हैं। उनका कहना है –

'वसन्तहि प्रेम्णि गुणान्वस्तुषु।'

सौन्दर्य साहित्य का शाश्वत धर्म है, इसके बिना वह शून्य है। यद्यपि सत्य और शिव भी साहित्य के उपास्य है पर साहित्य का सत्य और शिव यदि सौन्दर्य रहित है तो वहाँ कुछ नहीं रह जाता लेकिन इस सीमा रेखा को भी ध्यान में रखना चाहिये कि उसका अंकन अनिष्टकारी न हो। महाकवि कालिदास के शंकर पार्वती से कहते हैं –

यदुच्यते पार्वति! पापवृत्तये न रूपमित्यव्यभिचारि तद्वचः।
तथाहि ते शीलमुदारदर्शने तपस्विनामप्युपदेशतां गतम्।।[5]

भारतीय–काव्य तत्वज्ञ अथवा विचारक उस सौन्दर्य की अनुभूति को रसानुभूति कहते हैं जो पूर्णतः मानसिक है, जिसके लिये साधारणीकरण आवश्यक है। भारतीय सौन्दर्य की अवधारणा का निरूपण करते हुये उसे ब्रह्मानन्द सहोदर कहा गया है।

सत्वोद्रेकादखण्डस्य प्रकाशानन्दचिन्मयः।
वेद्यान्तर स्पर्शशून्या ब्रह्मस्वादसहोदरः।

साहित्य का सौन्दर्य कवि कल्पना पर आधारित होता है। कवि कल्पना केवल कल्पना नहीं होती है संसार के सुख–दुख के साथ उसका तादात्मय रहता है। भारतीय कवियों ने प्रकृति की अलौकिक छवि में उस सौन्दर्य को देखा, वसन्त की सुषमा में उसे पाया, ईश्वर की श्रेष्ठतम सृष्टि स्त्री व पुरुष अर्थात् मानव के दोनों पक्षों में उसने सौन्दर्य की झलक देखी। जहाँ उसे रमणीयता के दर्शन हुये उन सबको उसने संजोया यही संकलन शायद काव्य है। इसीलिये पण्डितराज ने कहा है –

'रमणीयार्थ प्रतिपादकं शब्दं काव्यं।

प्रकृति ने रमणीयता का केन्द्र नारी को बनाया है। प्रकृति की सर्वाधिक रमणीय रचना नारी है उसके अनेक रूपों में कवियों ने उस रमणीयता को देखा। इसीलिये सम्भवतः श्रृंगार को रसराज की उपाधि से विभूषित किया। श्रृंगार का स्थायी भाव रति है। रति सौन्दर्य का पर्याय है। अतः साहित्य के प्रतिमानों में इसी सौन्दर्य को चित्रित किया गया है। सुन्दर देह यष्टि वर्ण, अधर, नयन, केश, उरूज आदि सौन्दर्य के केन्द्र माने जाते हैं। भारतीय आलोचक रसौवसः कहकर रसरूप एवं आनन्दरूप ब्रह्म की ज्योति से विश्व सौन्दर्य की उत्पत्ति मानता है। सौन्दर्य को वस्तुनिष्ठ मानते हुये उसकी अनुभूति को रसानुभूति कहता हुआ ब्रह्मनन्द के सहोदर के रूप में उसे मान्यता देता है।
कालिदास सौन्दर्य दृष्टा है वो पाठक को सौन्दर्य के उस विशेष लोक में पहुँचाकर मौन हो जाता है और पाठक से कहता है – देखो, तुम भी देखो मैं भी देख रहा हूँ। शब्द न मेरे पास है और न तुम्हारे पास होंगे। वह लोक केवल अनुभूति का लोक है वहाँ वाणी मौन हो जाती है। मूक भाव व्यंजना की स्थिति वहीं होती है।
कालिदास मूलतः प्रकृति के चितेरे है और प्रेम के व्याख्याता। उनकी रमणीयता और सरसता का जितना भी वर्णन किया जाये उतना कम है। केवल प्रकृति ही नहीं बल्कि मानव सौन्दर्य का भी हृदयाकर्षक चित्रण किया है। नारी सौन्दर्य का संस्पर्श उसकी हृदय वीणा के तारों को झंकृत कर देता है। वह सौन्दर्य को दैवी विभूति मानते हैं।
मानव रूप हो या प्रकृति रूप समान रूप से वह दैवी विभूति भास्वर हो रही है। नारी देह में जो सौन्दर्य अलौकिक आभा देता है वही प्रकृति के विभिन्न पदार्थों में प्रतिबिम्बित है। प्रकृति का सम्मोहन सारे विश्व को सम्मोहित करता है। वह एक ईश्वरयी लीला का सम्मोहन है। वो ही सम्मोहन नारी रूप में अभिव्यक्त होकर चराचर को आकर्षित कर रहा है। यही एक मुख्य कारण है कि कवि की नारी रूप वर्णन में दृष्टि प्रकृति जगत का अनुसंधान करती है और प्रकृति के रूप में नारी सौन्दर्य का। एक चित्र अवलोकनीय है – कण्व के आश्रम में वृक्ष सींचे जा रहे है। प्रियम्वदा केसर वृक्ष के सहारे अपनी सहेली शकुन्तला को खड़ी कर देती है और कहती है कि ऐसा लगता है कि इस वृक्ष से कोई लता लिपटी है उधर इस दृश्य को दुष्यन्त देख रहे है। वो कहते है– "इसके अधर किसलय है, बाहु विटपानुकारी है, अंग–अंग में उज्जवल नवयौवन पुष्प सा विकसित हो रहा है।"

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहु।
कुसुमविव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम।। [6]

कालिदास के सौन्दर्य बोध के मूल में यदि हम देखें तो आदि–कवि को पायेंगे। कवि ने वाल्मीकि के ऋण को रघुवंश में स्वीकार किया है।

अथवा कृतवाग्द्वारो वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः।। [7]

इसी प्रकार सौन्दर्य के संदर्भ में भी कवि वाल्मीकि के ऋण को स्वीकार करता है। शूपर्णखा अपने भाई रावण से सीता हरण का प्रस्ताव रखती हुयी सीता के रूप सौन्दर्य का उत्तेजक वर्णन करती है। कवि ने सीता के लिये पूर्णेन्दु, सदृशानना, सुकेशी, सुनासोरू, सुरूपा, तप्तकाञ्चनवर्णाभा, रक्ततुङ्गनखी, वरारोहा, तनुमध्यमा विशेषण बनाये हैं। [8]

सा सुकेशी सुनासोरू : सुरूपा च यशस्विनी।
देवतेव वनस्यास्य राजते श्रीरिवापरा ।।
तप्तकाञ्चनवर्णाभा रक्ततुङ्गनरवी शुभा।
सीता नाम वरारोहा वैदेही तनुमध्यमा।।

आदि काव्य के सौन्दर्य वर्णन को कवि ने अवश्य लिया होगा। मानवरूप हो या प्रकृति रूप दोनों के वर्णन में कवि आदि कवि का ऋणी प्रतीत होता है।
महाकवि की नायिकायें विश्व में बिखरे हुये सौन्दर्य की पूंजीभूत मूर्ति हैं। ब्रह्म ने इस नारी सौन्दर्य का निर्माण अनायास ही नहीं किया बल्कि पहले बहुत सोचा विचारा होगा फिर एक काल्पनिक चित्र बनाया होगा जब उस चित्र के सर्वांग सौन्दर्य से वो पूरी तरह संतुष्ट हुये होंगे तब उसमें प्राण संचार किया होगा और वो सृष्टि है कालिदास की शकुन्तला।

चित्रे निवेश्य परिकल्पित सत्त्वयोगा
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।
स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा प्रतिभाति सा मे
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः।। [9]

कुमारसम्भव की पार्वती का सौन्दर्य भी कुछ ऐसा ही है। ब्रह्मा ने सारे विश्व के सौन्दर्य उपमानों को एकत्रित कर यथास्थान संजोया होगा वह मूर्ति महाकवि कालिदास की पार्वती है –

सर्वोपमाद्रव्यसमुच्चयेन यथाप्रदेशं विनिवेशितेन।
सा निर्मिता विश्वसृजा प्रयत्नादेकस्थ सौन्दर्यादिदृक्षयेव।।[10]

मेघदूत के यक्ष की स्थिति तो और भी विचित्र है। वह रामगिरि पर्वत पर बैठा है तथा अपनी प्रिया के सौन्दर्य को प्रकृति के अंगों में अलग–अलग देख रहा है पर सबको एक ही स्थान पर देखने की उसकी आकांक्षा पूरी नहीं हो पा रही है। वह उस सौन्दर्य समुच्चय को देखना चाहता है जो उसकी प्रियतमा में है।

श्यामास्वङ्गं चकितहरिणी प्रेक्षणे दृष्टिपातं
वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषु केशान्।
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भ्रूविलासान्
हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि सादृश्यमस्ति। [11]

कवि के सौंदर्य का आकर्षण कुछ ऐसा ही है। शैल सुता की कमनीय कान्ति, पुलक प्रेम की अभिव्यंजना तृपा से झुके हुये नयनों की बक विलोकिन शंकर को भी विचलित कर रही है। रूप की यह मादकता कालिदास के काव्य में यत्र–तत्र देखने को मिलेगी।

विवृण्वती शैलसुताऽपि भावमङ्गैः स्फुरद्बालकदम्बकल्पैः।
साचीकृता चारूतरेण तस्थौ मुखेन पर्यस्तविलोचनेन।। [12]

महाकवि कभी–कभी यह भी शंका कर बैठता है कि ब्रह्मा जैसा वेद–जड़ विश्वमोहक सौन्दर्य का निर्माण कर ही नहीं सकता क्योंकि वह तो विषयी पराङ्गमुख है, वेदाभ्यास जड़ भी है, उससे इस अलौकिक सौन्दर्य के निर्माण की कल्पना नहीं की जा सकती। निश्चय ही कौमुदी सम्राट अथवा साक्षात् मदन या वसन्त इस सृष्टि का विधाता होगा।

अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः
शृङ्गारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो न पुष्पाकरः।
वेदाभ्यासजड़ः कथं नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो
निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।। [13]

मेरे कवि का सौन्दर्य दिव्य लोक द्वारा इस पृथ्वी को दिया हुआ उपहार है क्योंकि यह दिव्यता पृथ्वी में सम्भव नहीं है। प्रभा तरल ज्योति पृथ्वी से उदय नहीं होती।

मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः।
न प्रभातरलं ज्योतिरूदेति वसुधातलात्।। [14]

कालिदास अनलंकृत सौन्दर्य के उपासक हैं। पवित्र तपोवन में तपस्वी कन्याओं के मध्य अलौकिक रूप सम्पन्न शकुन्तला को देखकर कवि कह उठता है –

दूरीकृताः खलु गुणैरूद्यानलता वनलताभिः।

वस्तुतः रमणीयता सभी अवस्थाओं में रमणीय ही होती है। उसे मण्डन की आवश्यकता नहीं है। आचार्य विश्वनाथ कहते हैं–

"सर्वावस्था विशेषेषु माधुर्यं रमणीयता। [15]

कालिदास की शकुन्तला भी कुछ ऐसी ही है भले ही उसने वल्कल पहने हो पर वो वल्कल उसकी मनोहरता को कई गुना अधिक बढ़ा रहे हैं।

"सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव ही मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।। [16]

महाकवि का सौन्दर्य आभूषणों की अपेक्षा नहीं रखता। वह सहज गुणों का पक्षपाती है। वर्ण, प्रभा, राग, रूप, अभिजात्य, लावण्य आदि ही सौन्दर्य को निखारते है।

आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में सुंदरियों के भावरसाश्रय अलंकारों की चर्चा की है। इनमें तीन शारीरिक या अंगज है – हाव, भाव, हेला। सात अयत्नज है– अर्थात् बिना किसी यत्न के विधाता की ओर से प्राप्त होते हैं– शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य, धैर्य, पृगल्भता और औदार्य। दस स्वाभाविक हैं जो विशेष–2 स्वभाव के व्यक्तियों में मिलते हैं। [17]

कालिदास की दृष्टि मुख्यतः इन्हीं सहज गुणों की ओर गयी है। इन्होंने अपनी रचनाओं में 'भूषण', अलंकार', 'मण्डन', 'आभरण' इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया है। [18]

साधारणतः कालिदास ने 'अलंकार' और 'भूषण' शब्दों का प्रयोग स्वर्ण, मणि आदि से बने अलंकारों के लिये किया। 'मण्डन' शब्द का प्रयोग प्राकृतिक उपादानों जैसे पुष्प, चंदन, पल्लव, गोरोचन, अलक्तक आदि के प्रसंग में किया है तथा आभरण शब्द का प्रयोग दोनों अर्थों में किया है।

कवि ने आभरणों की उपयोगिता कभी स्वीकार नहीं की। रूप संस्कार के लिये भी वह उनकी उपयोगिता नहीं मानते। उनका मत है कि आभूषण सौन्दर्य को जितना आभूषित करते है उससे अधिक सौन्दर्य के संसर्ग से वे अलंकृत होते है।

कण्ठस्य तस्याः स्तनबन्धुरस्य मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य
अन्योन्यशोभाजननाद् बभूव साधारणो भूषणभूण्यभावः।। [19]

उर्वशी का शरीर आभरणों का भी आभरण है।

आभरणस्याभरणं प्रसाधनविधेः प्रसाधनविशेषः।
उपमानस्यापि सखे प्रत्युपमानं वपुस्तस्याः।। [20]

कवि की नायिका का सौन्दर्य लावण्य में निहित है जो कामिनी के सारे अंगों से अलग है। आचार्य आनन्दवर्धन ने भी लावण्य को अंगों से अतिरिक्त कुछ अनोखा ही माना है। [21]

प्रतीयमानं पुनरन्यदेव, वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम्।
यत् तत् प्रसिद्धावयवातिरिक्तं, विभाति लावव्यमिवाङ्गनासु।।

वस्तुतः लावण्य प्रतिक्षण परिवर्तित होता रहता है। शकुन्तला के चित्र को बहुत कुछ परिमार्जित करने के बाद भी वह रेखाओं में नहीं बंध सका।

यद्यत्साधु न चित्रे स्यात्क्रियते तत्तदन्यथा।
तथापि तस्या लावण्यं रेखया किञ्चिदन्वितम्।। [22]

नख–शिख वर्णन में कालिदास की कोई विशेष रुचि नहीं है। कुमारसम्भव में पार्वती के वर्णन में थोड़ा प्रयास उसने अवश्य किया पर वो भी जघनों के वर्णन में ही समाप्त हो गया। जो भी लावण्य विधाता के पास था उसका मानसल जघनो के निर्माण में समाप्त हो गया। ब्रह्म को फिर और सामग्री जुटानी पड़ी।

वृत्तानुपूर्वं च न चातिदीर्घे जङ्घे शुभे सृष्टवतस्तदीये।
शेषाङ्गनिर्माण विधौ विधातुर्लावण्य उत्पाद्य इवास यत्नः।। [23]

उमा के विशाल नयनों की चंचल चितवन की कला उमा ने हिरणियों से सीखी या हिरणियों ने उमा से इसका निर्णय आज तक नहीं हो पाया।

प्रवातनीलोत्पलनिर्विशेषमधीर विप्रेक्षितमायताक्ष्या।
तथा गृहीतं नु मृगाङ्गनाभ्यस्ततो गृहीतं नु मृगाङ्गनाभिः।। [24]

भगवान शंकर की प्राप्ति कामना के लिये पार्वती तपकर रही है। अतः तप की पूर्णता तक के लिये उसने तन्वी लताओं में विलास चेष्टा, हिरणाङ्गनाओं में विलोल दृष्टि निक्षेप रख दी है ताकि तप की पूर्णता के बाद वापस ली जा सके।

पुनर्ग्रहीतुं नियमस्थया तया इयेऽपि निक्षेप इवार्पितं द्वयम्।
लतासु तन्वीषु विलासचेष्टितं विलोलदृष्टं हरिणाङ्गनासु च।। [25]

आदि–कवि के युग से ही नारी मूर्ति की स्पष्ट परिकल्पना और उसका लावण्य हमारे साहित्य में अवतीर्ण हो चुका था पर रूप साधना में नारी का जो मोहक चित्र प्रस्तुत किया था उसको पूर्णता कालिदास में ही मिलती है। यक्ष पत्नी तन्वी है, श्यामा है, शिखरिदशना है, पक्वबिम्बाधरौष्ठी, चकितहरिणी प्रेक्षणा, निम्ननाभि, मन्दगतिका, स्तनभार से विनम्र सम्भवतः ब्रह्मा की यह आदि सृष्टि हो।

तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरौष्ठी
मध्ये क्षामा चकित हरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः।। [26]

कालिदास की नायिकायें सौन्दर्य की अधिष्ठात्री, सर्वांग सुन्दरी, तिलोत्तमायें हैं। शोभा और सौन्दर्य के वर्णन में नवयौवन का विशेष महत्व कवि ने स्वीकार किया है। सौन्दर्य और यौवन के वर्णन में कालिदास की उपमायें अद्वितीय है। कालिदास ने रमणी के कटाक्ष का ललित वर्णन किया है। इसलिये मेघदूत का यक्ष मेघ से कहता है –

वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः।
विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौराङ्गनानां
लोलापाङ्गैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि।। [27]

संक्षेप में महाकवि कालिदास सौन्दर्य प्रेम के भावुक कवि हैं। उनकी दृष्टि सौन्दर्य की कोमल भावनाओं को पहचानने और चित्रित करने में अत्यन्त ही निपुण है। उनका रसाप्लावित हृदय इन सौन्दर्य दृश्यों में झाँकता हुआ दिखाई देता है। सौन्दर्य के अन्तः और बाह्य दोनों पक्षों को उन्होंने समान रूप से ग्रहण किया। उनके सौन्दर्यात्मक आदर्श एवं सौन्दर्य दृष्टि और सृष्टि की जितनी भी प्रशंसा की जाये उतनी कम है।

संदर्भ सूची

1. नीतिशतक भर्तृहरि।
2. शुक्लयजुर्वेद 40–8
3. शिशुपालवध 4/17
4. नैषधीयचरितम 22/50
5. कुमार सम्भव 5–36
6. अभिज्ञान शाकुन्तलम 1–20
7. रघुवंश 1–4
8. वाल्मीकि रामायण उपसर्ग अरण्यकाण्ड–16, 17, 18, 19, 20
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 2–9
10. कुमार सम्भव 1–49
11. मेघदूत उत्तरमेघ – 46
12. कुमार सम्भव 3–68
13. विक्रमोर्वशीयम् 1–10
14. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1–24
15. साहित्य दर्पण 3–97
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1–19
17. नाट्यशास्त्र 24/12–13
18. 'भूषण'– रघुवंश, 18/45, 19/45; 'अलंकार'– शाकुन्तल– 4; 'मुण्डन'– कुमार सम्भव, 1/4, 2/11; 'आभरण', माल0 5/7; रघु. 14/54; कुमार. 3/53; 7/21 आदि
19. कुमार सम्भव 1–42
20. विक्रमोर्वशीयम् 2–3
21. ध्वन्यालोक प्र.उ.–4
22. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 6–14
23. कुमार सम्भव 1–35
24. कुमार सम्भव 1–46
25. कुमार सम्भव 5–13
26. मेघदूत उत्तर मेघ–22
27. मेघदूत पूर्वमेघ–29